जैनविद्या के मनीषी प्रोफेसर आल्सडोर्फ

✰ डा० जगदीशचन्द्र जैन

फरवरी का महीना था—कड़ाके की सर्दी पड़ रही थी। तापमान शून्य डिग्री से नीचे पहुँच गया था। लेकिन किसी भी हालत में हाम्बुर्ग तो पहुँचना ही था। इतनी जर्मन नहीं सीख पाया था कि निराबाध यात्रा कर गन्तव्य स्थान पर अकेला पहुँच सकूं। यद्यपि आल्सडोर्फ ने स्वयं हाम्बुर्ग स्टेशन पर पहुँच मुझे युनिवर्सिटी में लिवा ले जाने के लिये टेलीफोन किया था, परन्तु मैंने उनका यह प्रस्ताव अस्वीकार कर एक मित्र को साथ लेकर स्वयं उपस्थित होना ही ठीक समझा।

जर्मनी की रेलगाड़ियाँ अत्यन्त नियमित होती हैं। जहाँ काँटे पर घड़ी की सुई पहुँची कि गार्ड की सीटी सुनाई दी और गाड़ी फक्-फक् आवाज करती हुई चल पड़ी। हिन्दुस्तान जैसा भीड़-भड़क्का भी गाड़ियों में नहीं होता। सीटें खाली पड़ी रहती हैं। हम लोग १ मिनिट पहले पहुँचे और टिकट खरीद कर गाड़ी में सवार हो गये।

कील से हाम्बुर्ग पहुँचने में करीब डेढ़ घण्टा लगा। स्टेशन के दफ्तर में पता किया कि युनिवर्सिटी किस प्रकार पहुँचा जा सकता है। दफ्तर की एक युवती महिला ने नक्शे में दिखाकर हमें मार्ग-दर्शन किया। चलते समय शहर का एक नक्शा भी हमारे हाथ में थमा दिया। कहना न होगा कि यहाँ के लोग किसी अनजाने आदमी की मदद बड़ी तत्परता के साथ करते हैं। यदि कोई बात उन्हें स्वयं ज्ञात न हो तो किसी दूसरे या फिर तीसरे व्यक्ति से पूछकर बताते हैं।

जमीन के नीचे चलने वाली रेलगाड़ी में बैठकर हम लोग अपने गन्तव्य स्थान की ओर चले। स्टेशन से उतरने के बाद रास्ते में द्वितीय विश्वयुद्ध में काम आने वाले बन्दूकधारी सैनिकों का स्मारक बना हुआ था जिसे देखकर उस संहारकारी भीषण युद्ध की याद ताजा हो आई जो यहाँ की भूमि पर लड़ा गया था।

चारों ओर गगनचुम्बी इमारतें दिखाई दे रही हैं जिनका निर्माण प्रायः विश्वयुद्ध के बाद ही हुआ है। दीर्घकाय 'टावर' दिखाई दे रही है जिसके ऊपर चढ़कर देखने से सारे शहर का दृश्य दिखाई पड़ता है। इसकी पहली मंजिल पर एक रेस्तराँ बना हुआ है जो निरन्तर घूमता रहता है। योरोप में जर्मन गणतन्त्र, स्वीडन और पेरिस आदि नगरों में इस प्रकार की टावरें देखी जा सकती हैं।

रास्ते में फूलों की दूकान पर से हमने एक पुष्पगुच्छ खरीदा और युनिवर्सिटी की ओर चल पड़े। युनिवर्सिटी शहर की घनी बस्ती में ही है—हिन्दुस्तान की युनिवर्सिटियों जैसी शान-शौकत और तड़क-भड़क नहीं जो दूर से ही उन्हें पहचाना जा सके। अन्दर प्रवेश करते समय लगा कि जैसे कोई 'प्राइवेट अपार्टमेण्ट' हो।

इंडोलौजी विभाग की सेक्रेटरी हमें ऊपर ले गई। एक नवयुवक सज्जन ने (बाद में पता लगा कि वे बौद्ध-धर्म के सुप्रसिद्ध विद्वान् बैर्नहार्ड थे जिनकी अब मृत्यु हो गई है) हमारा स्वागत करते हुए कहा—हम लोग आपका इन्तजार ही कर रहे थे।

कुछ ही मिनिटों में एक उन्नतकाय, स्वस्थ और चुस्त व्यक्ति ने प्रवेश किया। उनकी मुखमुद्रा और भाव-भंगी देखकर मैं समझ गया कि यह वही विद्वान् होना चाहिये जिसके सम्बन्ध में हम लोग सुनते आ रहे हैं और जिससे भेंट करने के लिये मैं उपस्थित हुआ हूँ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जोरों से हस्तान्दोलन हुआ। पुष्पगुच्छ भेंट किया गया जिसे उन्होंने बड़ी प्रसन्नतापूर्वक एक पुष्पपात्र में सजाकर मेज पर रख दिया।

क्षणभर के अन्दर इतनी आत्मीयता का अनुभव होने लगा कि कुछ पूछिये मत। कुशल समाचार के बाद कहने लगे कि वसुदेव हिंडी में आपकी रुचि कहाँ से हो गई। मुनि पुण्यविजयजी की अत्यन्त श्रद्धापूर्वक चर्चा करते हुए उन्हें प्रणाम निवेदन किया।

लुडविग आल्सडोर्फ बड़े भाग्यशाली हैं जो बारह बार (सन् १९७४ तक पन्द्रह बार) भारत की यात्रा कर चुके हैं। १९३० में हाम्बुर्ग विश्वविद्यालय से पी-एच. डी की उपाधि प्राप्त करने के बाद वे पहली बार हिन्दुस्तान आये। लगभग २ वर्ष तक इलाहबाद विश्वविद्यालय में जर्मन भाषा के अध्यापक रहे। यहाँ रहकर उन्होंने संस्कृत के एक पंडित के पास संस्कृत का अध्ययन किया। उनके सान्निध्य में उन्होंने वेद, क्लासिकल संस्कृत साहित्य तथा अन्य धार्मिक ग्रन्थों को पढ़ा। गुरुजी आंग्ल भाषा और शिष्यजी हिन्दी भाषा के ज्ञान से वंचित थे, अतएव शिक्षा का एकमात्र साधन बना संस्कृत। उस समय के कितने ही रोचक संस्मरण आल्सडोर्फ बड़ी तन्मयता के साथ सुनाते हैं। 'जैंन्टलमैन' का लक्षण पूछने पर पंडितजी ने एक श्लोक सुनाया: "हैट बूट मुखे चूरुट....." (शेष भाग इन पंक्तियों के लेखक को स्मरण नहीं रहा)। पंडित जी सभी शब्दों का अर्थ संस्कृत में समझाया करते थे, कभी अपवादमार्ग का भी आश्रय लेना पड़ जाता था। 'रबर' शब्द का संस्कृत में पर्यायवाची न था, अतएव 'रबर इत्यभिधीयते' कहकर सन्तोष कर लिया जाता।

अपनी भारत-यात्रा के दौरान आल्सडोर्फ ने दूर-दूर तक भ्रमण किया है। प्राचीन जैन ग्रन्थों की हस्तलिखित प्रतियों की खोज में उन्होंने जैसलमेर, अणहिलपुर पाटन (जिसे वे जैनपुरी कहते हैं) अहमदाबाद, कोल्हापुर, बम्बई आदि अनेक स्थानों का परिभ्रमण किया है। आबू, पालिताना आदि तीर्थस्थानों में पहुँच जैन मन्दिरों के दर्शन किये हैं। ऐसे भी प्रसंग उपस्थित हुए जबकि उन्हें मन्दिर के अन्दर प्रवेश करने से रोका गया। उस समय संस्कृत के श्लोक उनकी सहायता करते। श्रोता सफेद चमड़ी वाले एक विदेशी के मुख से संस्कृत के श्लोक सुनकर स्तब्ध रह जाते। और फिर तो उनका खूब सन्मान किया जाता—कितने ही लोग उन्हें पुस्तकें आदि भेंट करते।

अहमदाबाद पहुँच जैन उपाश्रय में जाकर उन्होंने स्व० मुनि पुण्यविजयजी के दर्शन किये। उन्हें शान्त्याचार्यकृत उत्तराध्ययन की पाइयटीका की आवश्यकता थी। मुनिजी ने पुस्तक तुरत निकालकर उनके हवाले कर दी। आल्सडोर्फ अत्यन्त प्रभावित हुए। बेलूर पहुँचकर जैनमठ के पुरोहित से साक्षात्कार किया। जब वे कोई बहुमूल्य ताड़पत्रीय प्रति दिखाने में व्यस्त थे तो गर्मी के कारण उनके शरीर से पसीने की एक बूंद पुस्तक के पृष्ठ पर चू गई! मूलाचार की स्याही से लिखी हुई एक प्राचीन ताड़पत्रीय प्रति आल्सडोर्फ के निजी पुस्तकालय की शोभा बढ़ा रही है। कोल्हापुर में लक्ष्मीसेन भट्टारक द्वारा उपहार में दी गई गोम्मटेश्वर की सुन्दर मूर्ति हाम्बुर्ग युनिवर्सिटी में आल्सडोर्फ के कक्ष में रक्खी हुई बहुत भव्य जान पड़ती है। हिन्दुस्तान से उपहार में मिली हुई और भी कितनी ही कीमती वस्तुएं बड़े करीने से सजाकर रक्खी हुई हैं। लगता है एक छोटा-सा हिन्दुस्तान उठकर चला आया है।

जैन आगम साहित्य के प्रकाण्ड विद्वान् और आल्सडोर्फ के विद्यागुरु प्रोफेसर वाल्टर शूब्रिंग का चित्र टंगा हुआ है। उनका आदेश था कि उनकी मृत्यु के पश्चात् उनके सम्बन्ध में कोई विवरण आदि प्रकाशित न किया जाये। उनके चित्र के निचली ओर उक्त आदेश छपा हुआ है।

आल्सडोर्फ सुप्रसिद्ध हाइनरिश ल्यूडर्स (१८६९-१९४३) के शिष्य रहे हैं। अर्न्स्ट लायमान (१८५९-१९३१) के सम्पर्क में वे आये तथा योरोप की विद्वन्मण्डली में जैनधर्म का बौद्धधर्म से पृथक् अस्तित्व सिद्ध करने वाले जैनधर्म के सुप्रसिद्ध मनीषी हर्मन याकोबी (१८५०-१९३७) से उन्होंने अभूतपूर्व प्रेरणा प्राप्त की। यह याकोबी की प्रेरणा का ही परिणाम था कि आल्सडोर्फ पुष्पदंतकृत महापुराण जैसा महान् ग्रन्थ हाथ में ले सके जो महत्वपूर्ण भूमिका आदि के साथ १९३६ में प्रकाशित हुआ। आगे चलकर दो वर्ष बाद उन्होंने रोम में होने वाली ओरिएन्टल कांग्रेस में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण निबन्ध पढ़ा जिसमें संघदासगणी कृत वसुदेव हिंडी को गुणाढ्य की बृहत्कथा का रूपान्तर सिद्ध किया गया। भारतीय विद्या के क्षेत्र में आल्सडोर्फ की यह विशिष्ट देन थी।

जहाँ तक भारतीय इतिहास और संस्कृति सम्बन्धी पुस्तकों के संग्रह की बात है, बर्लिन विश्वविद्यालय की लाइब्रेरी के बाद हाम्बुर्ग विश्वविद्यालय की लाइब्रेरी का ही नम्बर आता है। युद्धकालीन बमबारी से नष्ट होने से यह बच गई थी। वेद, पुराण, महाभारत, रामायण, स्मृति, दर्शन, बौद्ध और जैन आदि साहित्य सम्बन्धी पुस्तकों का यहाँ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बहुत अच्छा संग्रह है। समस्त जैन आगम और उनकी व्याख्यायें उपलब्ध हैं। कितने ही प्राकृत जैन ग्रन्थों की माइक्रो-फिल्म मौजूद है और चूर्णी-साहित्य की जेरोकापी कराकर इस साहित्य को सुरक्षित रखा गया है।

शोध विद्यार्थियों को काम करने के लिए हर प्रकार की सुविधा प्राप्त है। विभिन्न विषयों को लेकर शोध-कार्य हो रहा है। श्रीमती आडलहाइड मेटे ओघनिर्युक्ति के पिण्डैसणा अध्याय को लेकर शोधकार्य में संलग्न हैं (उनका यह शोध प्रबन्ध १९७४ में प्रकाशित हो चुका है और अब वे म्यूनिक विश्वविद्यालय के इंडोलौजी विभाग में जैन आगम साहित्य पर शोधकार्य कर रही हैं)। दिल्ली के राजेन्द्रप्रसाद जैन प्रोफेसर आल्सडोर्फ के निर्देशन में जैन आगम साहित्य सम्बन्धी किसी विषय को लेकर शोध-प्रबन्ध लिख रहे है। कई वर्ष से यहाँ रह रहे हैं, यूनिवर्सिटी में विद्यार्थियों को हिन्दी पढ़ाते हैं। (पता लगा है कि आजकल जवाहरलाल नेहरू यूनिवर्सिटी, दिल्ली में जर्मन भाषा के अध्यापक हो गये हैं)। एक सज्जन "महाभारत में अस्त्र-शस्त्र" पर कार्य कर रहे हैं।

तिब्बत के लामा का परिचय प्राप्त किया। आठ वर्ष की अवस्था में लामा बन गये थे। तिब्बत से वे भाग निकले। दलाई लामा ने उनकी नियुक्ति के लिए सिफारिश की, और बस हवाई जहाज में सवार हो सीधे हाम्बुर्ग हवाई अड्डे पर पहुँच गये। जर्मन भाषा का ज्ञान न था। लेकिन बिना डिक्शनरी अथवा बिना किसी बीच की भाषा के शीघ्र ही जर्मन सीख गये। अब तो सारा कारोबार जर्मन के माध्यम से ही चलता है।

जर्मन विश्वविद्यालयों में तिब्बती भाषा का अध्ययन-अध्यापन काफी लोकप्रिय हुआ है। कितना ही बौद्ध साहित्य इस भाषा में सुरक्षित है जो अन्यत्र उपलब्ध नहीं। प्रोफेसर बेर्नहार्ड तिब्बती पर शोधकार्य कर रहे हैं। लगता है अपने शोधकार्य में पूरी तरह डूबे हुए हैं। कबीर की 'गहरे पानी पैंठ' वाली उक्ति याद आ गई। बड़े ही प्रभावशाली दिखाई देते हैं और साथ ही अत्यन्त विनम्र भी। फोन पर बात होती रही : "हम लोग सुखी नहीं; भारत एक महान् देश है, संस्कृति का खजाना है। बारिश हो रही है, नहीं तो मैं आपको शहर में घुमाता। आप ऐसे समय पधारे हैं और वह भी शहर के उस हिस्से में जो बिलकुल भी सुन्दर नहीं। दूसरी बार जब आप आयेंगे मैं आपको अपने साथ ले चलूँगा, हम लोग हिन्दुस्तान के बारे में बात करेंगे।" कुछ समय बाद अपने शोधकार्य के सिलसिले में बेर्नहार्ड को नेपाल जाना पड़ा और दुर्भाग्य से वहीं उनकी मृत्यु हो गयी। फिर कभी साक्षात्कार न हो सका।

आल्सडोर्फ को चलती-फिरती ऐनसाइक्लोपीडिया ही समझिये। अपने विषय के अतिरिक्त कितनी ही बातों की जानकारी उन्हें है जिन्हें अत्यन्त मनोरंजक ढंग से पेश करने में वे सिद्धहस्त हैं। आप उन्हें सुनते जाइये, कभी किसी तरह की ऊब का अनुभव न होगा।

अंग्रेजी भाषा के सम्बन्ध में चर्चा करते हुए बोले कि यह भाषा अन्तर्राष्ट्रीय भाषा कही जा सकती है और इसमें मुहावरों का सौन्दर्य है, जिसका प्रयोग बहुत कम लोग जानते हैं। (अपनी भाषा के गर्व के कारण जर्मन विद्वान् अंग्रेजी की ओर प्रायः उदासीन रहते हैं किन्तु आल्सडोर्फ अंग्रेजी बड़े धड़ल्ले के साथ बोलते और लिखते हैं।) उन्होंने बताया कि उनके पास भारत से कितने ही लोगों के पत्र आते हैं कि वे जर्मनी आकर इण्डोलौजी पढ़ना चाहते हैं, या उनके विश्वविद्यालय में हिन्दी पढ़ाना चाहते हैं, लेकिन उन्हें इस बात की कल्पना नहीं कि जर्मनी में आने के लिए जर्मन भाषा का जानना अत्यन्त आवश्यक है। हिन्दी आदि का अध्यापन करने के लिए भी ऐसे ही अध्यापकों की आवश्यकता है जो जर्मन के माध्यम से शिक्षा दे सकें।

विभाग के छात्र, छात्राओं एवं अध्यापकों के बीच चर्चा हो रही थी। एक जर्मन युवती जो तमिल भाषा का अभ्यास कर रही थीं, बीच में उठकर, हम लोगों के लिए चाय बनाकर लाई। मेरी तरफ मुखातिब होकर हिन्दी में बोली—चाय-पान कीजिये।

समय काफी हो गया था। जिस सम्बन्ध में चर्चा करने में आया था, उसकी कोई चर्चा नहीं हो पायी थी। चाय-पान के बाद आल्सडोर्फ का इशारा पाकर विद्यार्थी वहाँ से चले गये। उसके बाद वसुदेव हिंडी पर चर्चा होती रही। जैसा कहा जा चुका है, आल्सडोर्फ ने ही सर्वप्रथम दुनिया के विद्वानों का ध्यान वसुदेव हिंडी की महत्ता की ओर आकर्षित किया, इस बात की घोषणा करके कि यह अनुपम ग्रन्थ गुणाढ्य की बृहत्कथा का रूपान्तर है। वसुदेव हिंडी को लेकर जो कार्य उन्होंने किया था, उस सम्बन्ध की जो भी प्रकाशित अथवा अप्रकाशित सामग्री उनके पास थी, उसका पुलिन्दा उन्होंने मेरे समक्ष लाकर रख दिया। निस्संकोच भाव से उस सामग्री का उपयोग करने के लिए उन्होंने मुझसे कहा। इस सामग्री में भारत-भ्रमण के समय स्वयं मुनि पुण्यविजयजी के हस्ताक्षर सहित उन्हें भेंट की हुई वसुदेव हिंडी की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक प्रति भी थी जिसका आद्योपान्त पारायण कर जगह-जगह आल्सडोर्फ के नोट्स लिखे हुए थे। वसुदेव हिंडी जैसे महान् ग्रन्थ का सम्पादन कर उसे प्रकाश में लाने के लिए मुनिजी की स्तुति करते हुए उन्होंने ग्रन्थ-सम्पादन की कमजोरियों की ओर लक्ष्य किया। उनका कथन था कि वसुदेव हिंडी की प्रकाशित टैक्स्ट में कितने ही पाठ अशुद्ध हैं और कितने ही शुद्ध पाठ टैक्स्ट में न देकर फुटनोट में दिये गये हैं। उनके पास भी वसुदेव हिंडी की एक ताड़पत्रीय प्रति है किन्तु उनका कहना है कि अब टैक्स्ट का शुद्ध करना टेढ़ी खीर है। धर्मदासगणी महत्तरकृत अप्रकाशित (एल० डी० इन्स्टीट्यूट ऑफ इण्डोलौजी, अहमदाबाद से प्रकाश्यमान) मज्झिम खंड के सम्बन्ध में चर्चा करते हुए उन्होंने इस रचना को कोई खास महत्वपूर्ण नहीं बताया। इन पंक्तियों के लेखक की 'द वसुदेव हिंडी—ऐन ऑथेण्टिक जैन वर्जन आफ दी बृहत्कथा' नामक पुस्तक की पांडुलिपि की भूमिका पढ़कर उन्होंने अपने भ्रम का निवारण किया)। उसके बाद दशवैकालिकसूत्र में मांस प्रकरण आदि अनेक विषयों को लेकर बातचीत होती रही।

उसी दिन कील वापिस लौटना था। प्रोफेसर याकोबी लॉयमान और शूब्रिंग जैसे जैनधर्म के प्रकाण्ड पंडितों की स्वस्थ परम्परा को सुरक्षित रखने वाले जैनविद्या के इस महामनीषी (अभी कुछ समय पूर्व भगवान् महावीर के २५००वें निर्वाण महोत्सव के अवसर पर, आचार्य तुलसी के सान्निध्य में, प्रोफेसर आल्सडोर्फ को नई दिल्ली में आमंत्रित कर जैन विश्व भारती की ओर से उन्हें 'जैन विद्या मनीषी' की पदवी से समलंकृत किया गया है) ने भारतीय संस्कृति के उत्कर्ष के लिए कितना अथक परिश्रम किया है—यह सोचकर मैं मन ही मन श्रद्धा से विनत हो उठा।

फिर से जोर के साथ हस्तान्दोलन हुआ। 'ऑफ हिदरजेन' (फिर मिलेंगे) कहकर मैंने विदा ली।

पुष्कर वाणी

पानी ! तुम दूध के भाव बिकते हो यह कितना बड़ा धोखा है ?

पानी—मैं दूध में तन्मय (एकाकार) बन जाता हूँ तभी उसी का मूल्य प्राप्त करता हूँ। तन्मयता कभी प्रवंचना नहीं बनती।

सच है, अगर आत्मा भी परमात्म-प्रेम में तन्मय बन जाये तो वही परमात्म पद पर प्रतिष्ठित हो जाती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org